RESEARCH PAPER

RESEARCH HUB International Multidisciplinary Research Journal
e-ISSN: 2349-7637 | Vol.09 | Iss.01 | January 2022 | pp. 45-49
Double-Blind Peer Reviewed/Refereed Journal

Social consciousness expressed in the novels of Shashi Prabha Shastri
शशि प्रभा शास्त्री के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना

*Shilpi Sharma

Research Scholar, PhD (Hindi), Raj Rishi Bhartrihari Matsya University, Alwar, Rajasthan

Abstract

Among Hindi writers, the name of Shashi Prabha Shastri is like the radiant sun, who brought changes in the whole society with the sound of his writing. In writing different from men, he exposed his specialties, eccentricities, challenges, struggles and experiences and imaginations. In his novels, the filthiness prevailing in life, human ugliness, frustration of middle-class life and present anger-disappointment in the domestic life of husband and wife, opposition-resistance, love-hatred, attachment-separation and the natural pace of life have also been mentioned. Shashi Prabha Shastri has highlighted political, social, economic, religious problems prominently in his literature.

Keywords: *Gyamluvatkeru social consciousness, family disintegration, eradication, moral values, inequality, malpractices.*

Abstract in Hindi

हिंदी साहित्यकारों में शशि प्रभा शास्त्री का नाम दैदीप्यमान सूर्य की तरह है जिन्होंने अपनी लेखनी की की आवाज से सम्पूर्ण समाज में परिवर्तन की हिलोरे ला दी। इन्होंने पुरूषों से भिन्न लेखन में अपनी विशिष्टताओं, विलक्षणताओं, चुनौतियों, संघर्षों व अनुभवों व कल्पनाओं को लेकर पर्दापण किया। इन्होंने अपने उपन्यासों में जीवन में व्याप्त मलिनता, मानवीय कुरूपता, मध्यमवर्गीय जीवन की कुण्ठा तथा पति–पत्नी के गार्हस्थिक जीवन में वर्तमान राग–विराग, विरोध–अवरोध, प्रेम–विद्वेष, लगाव–अलगाव एवं जीवन की स्वाभाविक गति को भी अंकित किया है। शशि प्रभा शास्त्री ने अपने साहित्य में राजनीति, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक समस्याओं को प्रमुख रूप से उजागर किया है।

Keywords: *झमलूवतकेरू सामाजिक चेतना, पारिवारिक विघटन, युगबोध, नैतिक मूल्य, विषमता, कुप्रथा।*

Article Publication

Published Online: 12-Jan-2022

***Author's Correspondence**

Shilpi Sharma

Research Scholar, PhD (Hindi), Raj Rishi Bhartrihari Matsya University, Alwar, Rajasthan

s09.sharma09[at]gmail.com

10.53573/rhimrj.2022.v09i01.009

© 2022 The Authors. Published by RESEARCH HUB International Multidisciplinary Research Journal. This is an open access article under the CC BY-NC-ND license (https://creativecommons.org/licenses/by-nc-nd/4.0/)

शशि प्रभा शास्त्री का जन्म उत्तर प्रदेश के प्रसिद्ध नगर मेरठ में अगस्त, 1923 में हुआ। समाज में नारी जीवन की व्यथाओं चित्रण शास्त्री जी के लेखन का केन्द्र बिन्दु है। अपनी लेखन प्रक्रिया से सम्बन्धित उनका वक्तव्य है ''मेरे लिए साहित्य सृजन अपने को मुक्त करने का एक सिलसिला है। मेरी मन की आँखों ने पारिवारिक, सामाजिक, राजनीतिक किसी भी क्षेत्र में जब दाहक विसंगतियों को घटित होते देखा, अनुभव किया है तो उस चुभन ने मुझे दिनों दिन चैन नहीं लेने दिया। आक्रोश, वेदना, छटपटाहट मुझ पर बराबर हावी रही है। यह स्थिति उस समय तक बनी रही है जब तक शब्दबद्ध करके मैंने कलम की नोक से कागज की छाती पर उसे उतार नहीं दिया है।''[1]

श्रीमती शशि प्रभा शास्त्री जिस सामाजिक परिवेश से जुड़ी थी, उसी परिवेश को उन्होंने अपने लेखन के लिए चुना। उनके ही शब्दों में मेरे सामाजिक परिवेश में सभी तरह के लोग शामिल है। बुद्धिजीवी, प्रबुद्ध लोगों से लेकर मोहल्ले की मध्यवर्गीय अर्थशिक्षित अथवा अल्पशिक्षित महिलाओं से लेकर मेहरी, भंगी, मजदूर इत्यादि सबके सम्पर्क में मैं आती रहती हूँ।''[2]

शशि प्रभा शास्त्री ने लगभग तीन सौ से भी अधिक कहानियाँ लिखी है लेकिन उपन्यास लेखिका के रूप में इन्होंने अक्षय ख्याति प्राप्त की है इनके प्रमुख उपन्यास है– अमलतास (1973), नावें (1974), सीढ़ियाँ (1976), परछाइयों के पीछे (1979), क्योंकि (1979), कर्क रेखा (1983), वीरान रास्ते और झरना (1983), परसों के बाद (1985), ये छोटे महायुद्ध (1988), मीनारें (1992), खामोश होते सवाल (1993), हर दिन इतिहास (1995)

शशि प्रभा शास्त्री ने अपने सभी उपन्यासों में व्यक्ति व समाज की परस्पर पूरकता, सामाजिक संघर्ष, सामाजिक विसंगतियों तथा सामाजिक जीवन में नारी की स्थिति को प्रमुख उजागर किया है। डॉ. शशि प्रभा शास्त्री के उपन्यास साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना–

नारी की त्रासदी :–

लेखिका का उपन्यास 'अमलतास' स्वतंत्रतापूर्व के रजवाड़े के भौतिक सुख–वैभव के कठघरे में बंधी, एक त्रस्त–ध्वस्त नारी की दर्द भरी कहानी है। गर्मी में अमलतास फूलता है। सम्पूर्ण वनस्पति संसार कुम्हलाया हुआ होता है, तो इसका आँचल रेशमी बसन्ती फूलों से भरा होता है लेकिन लेखिका ने उसे नायिका 'कामदा' के लिए उसे अभिशाप बताया है। अपने पति हरदेवलाल के स्पर्श से एक ओर जहाँ कामदा एक सुखद सिहरन से भर गयी, दसरे ही क्षण उसका सिर हरदेवलाल के मुँह से मितली लाने वाली गंध से भन्ना उठा। ''उसकी हर हरकत में एक विचित्र प्रकार का उज्जड़पन, अभद्रता एवं निर्दयता दृष्टिगोचर होने लगी।''[3] उसके बाद उसने कामदा के रूप की तुलना जन्नत बेगम से की और कहा, ''तुम्हारा रूप जन्नत बेगम की तरह भले हो, पर तुम्हारे रूप में वह कशिश नहीं, वह नजाकत और नफासत नहीं है जो कातिल का काम करती है।''[4] लेखिका ने हरदेवलाल जैसे व्यसनी, लम्पट आदमी द्वारा कामदा का तिरस्कार कर कामदा द्वारा नई राह चुनने का मर्मस्पर्शी वर्णन किया है।

व्यक्तिवादी निष्ठा :–

शशि प्रभा शास्त्री ने अपनी लेखनी के माध्यम से ''नावें'' उपन्यास में पुरूष व नारी के मनोभावों व अन्तर्द्वन्द्व को सशक्त रूप से अभिव्यक्त किया है। प्रस्तुत उपन्यास में नायिका 'मालती' द्वारा कुंवारी माँ बनने पर न केवल परिवार वरन् समाज द्वारा भी उसे तिरस्कार मिलता है लेकिन वह सोमजी की रखैल बनना स्वीकार नहीं करती तथा कहती है ''मैं स्वतंत्र जीवन बिताना चाहती हूँ इस तरह बंधक बन आपकी कृपा पर अवलम्बित रखने की चाह अब मेरे मन में नहीं रही।''[5] यह उपन्यास पति–पत्नी के सम्बन्धों में आये ठहराव की करूण दास्ता है। मालती को कुंवारी माँ बनने का जो अभिशाप मिला था वह उससे छुटकारा पा सकती थी ? वह अपने गर्भ को गिरा सकती थी ? लेकिन यहाँ लेखिका ने उसके व्यक्तिवादी तत्व को प्रधानता दी है।

संस्कारों व आदर्शों की रक्षा :–

शशि प्रभा शास्त्री का उपन्यास 'सीढ़ियाँ' रिश्तों एवं उम्र की कई सीढ़ियाँ लाँधकर बने उस मानवीय सम्बन्धों का दस्तावेज है जिसे स्वयं लेखिका आदर्श व संस्कृति का हवाला देकर धरातल पर ले आती है। 'सीढ़ियाँ' उपन्यास में कम उम्र का युवक सुकेत व प्रौढ़ विधवा 'मनीषी' प्रेम बंधन में बंध जाते हैं। सुकेत एक अखबार की कटिंग मनीषी के समक्ष रखता है ''वियना एक पैंतालीस वर्षीया महिला का विवाह एक तेईस वर्ष के युवक के साथ।''[6] कटिंग का अर्थ उसने समझकर जब अनसमझा कर दिया तब सुकेत ने कहा कि तुम बत्तीस की हो और मैं तुमसे कुछ साल छोटा हूँ फिर भी मैं तुमसे शादी करना चाहता हूँ तो मनीषी कहती है कि यह वियना नहीं हिन्दुस्तान है। वह धर्मशास्त्र की दलील देती है यहाँ यह उद्धरण आदर्शों व संस्कृति की रक्षा का परिचायक है।

परम्पराओं का निर्वाह :–

''परछाईयों के पीछे'' उपन्यास की नायिका सुमित्रा आधुनिक युग की सीता है जो अपने पति द्वारा मामूली शक पर लांछित, प्रताड़ित होती है।अपने पति द्वारा निष्कासित किये जाने पर भी अपने बच्चों के कारण हर अपमान को सहती है। फिर भी लेखिका ने सुमित्रा को महिपाल के साथ बार–बार समझौता करने पर मजबूर किया ? उससे तलाक नहीं दिलवाया। यहाँ सुमित्रा कहती है ''शायद मैं उससे मुक्ति चाहती ही नहीं वह इसलिए कि मैं अब भी उसे बेहद प्यार करती हूँ। शायद कि मेरे मन में अब भी पुराने संस्कार है, पुरानी चाहना कि हम दोनों आदर्श पति–पत्नी की तरह अपने बच्चों के साथ घर बनाकर रह सके।[7] सुमित्रा भारतीय परम्परा की पोषक के रूप में उभरकर आई है।

दहेज एक दानव :–

'क्योंकि' उपन्यास कामकाजी नारियों की अनेक समस्याओं के साथ दहेज जैसी कुप्रथा के दुष्परिणामों को लेकर चित्रित किया गया है। उपन्यास में 'शकुन्तला तायल' की शक्ल–सूरत अच्छी होने पर भी दहेज न जुटा पाने के कारण उसकी शादी हो नहीं पाई तब उसने निश्चय किया कि ''मैं शादी तभी करूँगी, जब कोई मेरी खासियत को पहचानने वाला खुद आगे बढ़कर सामने आएगा। पर लगता नहीं, उस तरह के इंसान ने इस मुल्क में जन्म ले लिया है।''[8] वह कहती है ''अगर आज लड़कियाँ प्रोटेस्ट कर दे, कि वे ऐसे लड़के से कभी शादी करेंगी जो अपना सौदा करने देता है, तो आज सब समस्याएँ हल हो जाएँ, पर लड़कियों में इतनी हिम्मत है ही नहीं।''[9]

शशि प्रभा शास्त्री ने माना है कि आज की नारी अपनी सीमा व सामर्थ्य को पहचान कर अर्थोपार्जन कर रही है और अपने प्राप्य के लिए संघर्षरत है। साथ ही नौकरी पेशा होने के कारण नारी को दोहरी भूमिका का निर्वाह करना पड़ रहा है जिससे दोहरे तनावों की मार भी झेलनी पड़ रही है।

दाम्पत्य जीवन में रिक्तता :–

'कर्क रेखा' उपन्यास एक ऐसी नारी की व्यथा का चित्रण है जो एक विडम्बनापूर्ण जीवन जीने के लिए अभिशप्त है। लड़की को पराया धन मानने वाली माँ ने 'तनु' को सदा एक बोझ के रूप में ही लिया। नौकरी, सारे दिन ट्यूशन के बाद भी माँ के ताने–तनाजों और घर के बोझिल, स्वार्थी, कटु–कठोर वातावरण से ऊब कर वह विवाह के तैयार हो जाती है। विवाह के बाद भी एक रिक्तता, सूनेपन के कारण भीतर ही भीतर घुटती है। ''अनिद्य की ओर से इस तरह की जोर जबरदस्ती दबंगपन और अपनत्व तथा अधिकार दिखाये जाने के लिए वह कितना मरती थी, पर अनिद्य ने तो उसे मुक्त ही छोड़ दिया।''[10] लेखिका की कामकाजी, कर्मठ नायिका अपने ही घर में इतने काम–धाम के बीच कितनी अकेली, कितनी खाली हो गई ? ऐसा क्यों होता है ? यह विचार पाठक को सोचने पर बाध्य कर देता है।

माता–पिता के गलत व्यवहार का बालमन पर प्रभावः–

'वीरान रास्ते और झरना' उपन्यास की सारी कहानी एक ऐसी मानसिक ग्रन्थि की उलझनों के मध्य चलती है जो एक ओर जीवन को एक ऐसे रास्ते पर ले जाती है जहाँ अँधेरा है तो दूसरी ओर मानसिक ग्रन्थि खुल जाने पर जिन्दगी में सुनहरी किरणों का प्रवेश हो जाता है। नायिका अचला को अपनी माँ व चाचा के अवैद्य सम्बन्धों का पता चलने पर उसके मन में मानसिक ग्रन्थि का जन्म हो जाता है जिससे उसका जीवन आवारागर्दी में बितता है। वह सोचती है ''मैं एक गन्दी औरत की लड़की हूँ और बुरे बाप की बेटी है। मैं हरगिज कुलीन नहीं हो सकती।''[11] उपन्यास का नायक शैलेन्द्र उसकी मानसिक ग्रन्थि को निकालने का प्रयास करता है। वह अचला से विवाह कर उसे समाज की नजरों में प्रतिष्ठित स्थान देता है। इस प्रकार उपन्यास का अन्त आदर्शवादी हो जाता है।

पारिवारिक विघटन की समस्या :–

'परसों के बाद' उपन्यास महानगरों में कार्यालयों में काम करने वाले पति–पत्नी के बच्चों के अकेलेपन की समस्या के साथ पारिवारिक विघटन की समस्या को भी उभारा गया है। मुन्नों की प्रथम वर्षगाँठ पर दादा विक्रम जी व दादी चन्द्रा जी अपने शहर से इतनी दूर दिल्ली चले आते हैं। बेटा–बहू दोनों को फुरसत नहीं थी कि इतने दूर से आये माँ–बाप के लिए एकाध दिन तो घर में रहते। ''बड़े शहरों में रहने वालों के भाग्य की विडम्बना यही है, उनकी जिन्दगी एकदम मशीनी होती है। मशीनी जीवन में भावना पीछे पड़ जाती है।''[12] अंत में उपन्यास का नायक शंकर विदेश चला जाता है। यांत्रिक युग में भी रक्त–सम्बन्धों में उठा उबाल चन्द्रा जी (दादी) समझ नहीं पाती तथा मुन्नों के सुखद स्पर्श की अनुभूति की गरमाहट को वह भूल नहीं पाती। बाल–मनोविज्ञान के आधार पर यह उपन्यास खरा उतरता है।

दो पीढ़ियों के बीच तकरार :–

दो पीढ़ियों के बीच तकरार–असहमति को लेकर लिखा गया यह उपन्यास पाठकों को सोचने पर विवश कर देता है कि इतने सामान्य मुद्दों को लेकर भी तकरार हो सकती है ? पति के आकस्मिक रूप से चले जाने के कारण ''गार्गी'' पूरे परिवार की जिम्मेदारी सम्भालती है तथा लड़कियों की कड़े नियमों के साथ परवरिश करती है। छोटी–छोटी बातों की तकरार के कारण बहू से भी उनकी नहीं बन पाती तथा वह अपनी बेटी लोपा के घर चली जाती है। माँ गार्गी ने नौकरानी के कामों में खुडपेंज निकालकर उसके कामों को हीन सिद्ध करने में लगी रहती थी।उनकी कर्कशा आवाज सबको अप्रिय लगती ''परस्थितियों से निर्मित उनकी आवाज में तुर्शी और कठोरता होने के कारण उनका हर वाक्य प्रायः कर्कशता लिए होता।''[13] दखलंदाजी करना जन्मजात प्रकृति थी। वह सबके क्रियाकलापों पर कटु टिप्पणियाँ करती। घर की दीवारें उनको काटने

लगी। आश्रम जाने पर भी उनकी सांसारिक लालसाएँ पूरी नहीं होती। घर वापस आने पर भी उनका रंग–ढंग वही रहता है ''हम तो आना ही नहीं चाह रही थी, इन्हें लोगों ने जबरदस्ती की घर जाओ ? ऐंठ अब भी बरकरार थी, ज्यों की त्यों।''[14] जिन्दगी भर उन्होंने समझौता नहीं किया।अपने बेफिजूल सिद्धान्त बनाये रखे। बेटी लोपा की भावनाएँ माँ गार्गी समझ नहीं पाई।

खोखली मान्यताओं का तिरस्कारः–

'उम्र एक गलियारे की' उपन्यास में शशि प्रभा शास्त्री ने दाम्पतय जीवन से सम्बन्धित अनेक प्रश्न उठाए हैं। इस उपन्यास में नायिका सुनंदा आनन्द प्राप्ति के लिए पाप–पुण्य की खोखली मान्यताओं को ठोकर मारकर अपनी जिन्दगी अपने ढंग से जीने का प्रयास करती है। लेखिका ने पहली बार किसी नायिका को अपने चरित्र पर विचार व मान्यताएँ थोपने के बजाए उसे अपने ढंग से जीने का अवसर देती है। सुनंदा अपने पति नवीन की शुष्कता से दुखी हो जाती है। सुनंदा की दीदी कहती है ''कुछ न कुछ तो होगी ही, नहीं तो ऐसा भी क्या कि नयी ब्याहली बहू हो, पहलोटी का बच्चा हो, वह भी बेटा और मरद एक भी पत्र न लिखे।''[15] कई वर्षों बाद भी अपने पति के ठंड़े व उत्साहीन व्यवहार से पीड़ित होकर सुनंदा अपने प्रेमी देवेश के प्रति समर्पित हो जाती है ''जिन्दगी में बहुत बसायंद भरी गयी थी देवेश, एक फफूंदन लगी महसूस होती थी। बहुत घट गयी थी, पूरी देह में एक विचित्र बासापन व्याप गया था।''[16]

भ्रष्टाचारः–

''मीनारें'' उपन्यास में लेखिका ने शिक्षण संस्थाओं के भीतर पदाधिकारियों की पदलोलुपता व खोखलेपन को उजागर किया है। ऊँची मीनारों के पीछे सुधार की आड़ में स्वार्थ साधनों, भ्रष्टाचार को मुख्य रूप से चित्रित किया गया है। उपन्यास की नायिका 'प्रेमा दीवान' नवीन चेतना से युक्त महिला प्राचार्या है जिस पर प्रबंध समिति के सदस्य हावी रहते हैं। साथ ही मनोहर वैश्य जैसे मंत्री अपनी राजनीति चलाते हैं।

छात्रावास में होने वाली घटनाओं को भी इस उपन्यास में उजागर किया गया है। आज विभिन्न राजनीतिक दलों ने छात्र आंदोलन को अपनी रणनीति का जरिया बना लिया है। इस समस्या को भी लेखिका ने उजागर किया है। प्रेमा दीवान अपनी शक्ति के दुरूपयोग को रोक उसे सही दिशा में उपयोग करने के लिए छात्रों को प्रेरित करती है। ''काश, यह विद्यार्थी वर्ग अपनी इस शक्ति का उपयोग परीक्षाओं को स्थगित करवाने जैसी थोथी बातो में न लगाकर देश के किन्हीं जरूरी मुद्दों में लगाता।''[16] पूरे उपन्यास में प्रेमा दीवान हर स्थान पर अपने अस्तित्व व स्थान के लिए संघर्ष करती नजर आती है।

नारी नई राहों की अन्वेषक :– शशि प्रभा शास्त्री का उपन्यास 'खामोश होते सवाल' दो भागों में विभक्त है। प्रथम भाग 'कोडवर्ड' जिसकी नायिका मीना परिस्थितिवश हीनता ग्रन्थि की शिकार हो जाती है तथा अपने लिए गलत राह चुनती है।

''खामोश होते सवाल'' उपन्यास के दूसरे भाग की नायिका अनुराधा भी विपरीत परिस्थितियों से घिर जाती है फिर भी वह गलत राह नहीं चुनती वरन् अनर्गल सामाजिक मान्यताओं से जूझती, कर्तव्यपथ पर चलती है। लेखिका ने अनुराधा जैसी नारी पात्रों के माध्यम से नारी–मुक्ति चेतना की आवाज उठाई है। अनुराधा के कर्तव्य बोध को इस प्रकार दिखाया गया हैः–''औरत को ऐसा ही हिम्मती होना चाहिए। बच्चों को भी बनाया, ससुर की भी सेवा की और जरूरतमंद औरतों के लिए एक संस्था भी खोल दी। एक इंस्टीट्यूशन चलाना, उसे आगे बढ़ाना कोई मामूली काम है, बड़े–बड़े नहीं कर सकते।''[18]

पुरुष का छद्म व्यवहार बनाम नारी का कर्तव्य बोध :–

शशि प्रभा शास्त्री का उपन्यास 'हर दिन इतिहास नायिका वर्तिका के 'कर्तव्यबोध' का दस्तावेज है। वर्तिका शान्तनु से धोखा खाने के बाद सोचती तो यह राज है पत्र का जवाब न देने का ? ओए यह पुरूष नाम का प्राणी कितना धूर्त और कूर होता है। किसी की भी भावनाओं से खिलवाड़ करने में उसे रती भर दरेग नहीं होगा – मुझे यह मामूली औरत समझता होगा। तभी न उसने मेरे साथ उतना बड़ा छल किया था। हर शान्तनु अपनी शकुन्तला से हर युग में इसी प्रकार का छल करता ही है।''[19]

वर्तिका शान्तनु द्वारा किये गये छल ने टूटती नहीं है वरन् पूरे परिवार की जिम्मेदारी उठाती है। अपने दायित्वों को निभाती–निभाती बुढ्ढी हो जाती है। अंत में उसकी जिन्दगी में डॉ. सिन्हा आते हैं जो उसे अपने साथ जुड़कर जिन्दगी की राह में आगे बढ़ने के लिए कहते हैं।

निष्कर्ष :–

शशि प्रभा शास्त्री के उपन्यासों में सामाजिक चेतना स्पष्टतः मुखरित हुई हैं एक ओर जहाँ लेखिका ने व्यक्ति व समाज के अटूट सम्बन्धों को परिभाषित किया है वहीं दूसरी ओर उनके उपन्यास साहित्य में मूल्य विघटन की दशा व दिशा देखी जा

सकती है। समाज में नैतिक मूल्य के पतन के कारण ही पारिवारिक विघटन देखा जा सकता है जिसे शास्त्री जी ने अपने उपन्यासों में उकेरा है। उन्होंने नारी स्वतंत्रता में बाधक परम्पराओं के प्रति विरोध तथा स्वस्थ परम्पराओं के प्रति मोह प्रदर्शित किया है। शशि प्रभा शास्त्री जी ने अपनी पैनी दृष्टि से समाज की विषमताओं, कुप्रथाओं पर न केवल अपनी लेखनी चलाई है वरन् नारी को नई राहें प्रशस्त की है उनके उपन्यासों में युगबोध, स्पष्टता ही चित्रित होता है। विभिन्न समस्याओं से जुझते समाज का चित्र शशि प्रभा शास्त्री के उपन्यासों में देखा जा सकता है। जिसका समाधान करने का प्रयास भी इनके उपन्यासों में चित्रित है। इनकी दृष्टि समन्वित, स्वस्थ व प्रगतिशील है। समाज में नारी की दशा व दिशा को शशि प्रभा शास्त्री ने बखूबी चित्रित किया है।

संदर्भ–

शशि प्रभा शास्त्री, अमलतास, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1973, उपन्यास के फ्लैप से

डॉ. देशमाने पार्वती भगवान राव, डॉ. शशि प्रभा शास्त्री व्यक्तित्व एवं कृतित्व, पृ. 12

शशि प्रभा शास्त्री, अमलतास, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, 1973, पृ. 58

वही,, पृ. 58

शशि प्रभा शास्त्री, नावें, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1974, पृ. 25

शशि प्रभा शास्त्री, सीढ़ियाँ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1976, पृ. 226

शशि प्रभा शास्त्री, परछाईयों के पीछे, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1979, पृ. 64

शशि प्रभा शास्त्री, क्योंकि, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1979, पृ. 82

वही, पृ. 33

शशि प्रभा शास्त्री, कर्क रेखा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1983, पृ. 144

शशि प्रभा शास्त्री, वीरान रास्ते और झरना, (पॉकेट बुक), शाहदरा, दिल्ली, 1983, पृ. 31

शशि प्रभा शास्त्री, परसों के बाद, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1985, पृ. 5

शशि प्रभा शास्त्री, ये छोटे महायुद्ध, राजपाल एंड संस, नई दिल्ली, 1988, पृ. 24

वही, पृ. 140

शशि प्रभा शास्त्री, उम्र एक गलियारे की, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, पृ. 77

वही, पृ. 80

शशि प्रभा शास्त्री, मीनारें, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1992, पृ. 141

शशि प्रभा शास्त्री, खामोश होते सवाल, किताबघर प्रकाशन, नई दिल्ली, 1993, पृ. 218

शशि प्रभा शास्त्री, हर दिन इतिहास, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995, पृ. 76